ISSN: 2456–4397 RNI No.UPBIL/2016/68067 Vol-4* Issue-12* March- 2020
Anthology : The Research

कभी न छोड़े खेत उपन्यास की सशक्त नारी

गौरी अग्रवाल
सहायक प्राध्यापक (हिन्दी)
डॉ0 राधाबाई शासकीय नवीन कन्या विद्यालय रायपुर (छ0ग0)

सारांश

कहना न होगा कि प्रेमचंद ने हिन्दी की जातीय परंपरा को ही अपने उपन्यासों में रूपायित करने का सार्थक प्रयत्न किया है। बल्कि वे पहले ऐसे लेखक थे जिन्होनें जन साधारण की शूरता, धीरता, त्याग और बलिदान के सद्‌गुणों का चित्रण कर वास्तविक जीवन के 'हीरो' दिये। प्रेमचंद के ''गोदान'' से शुरू हुई हिन्दी की जातीय परम्परा जिसमें धरती के दुखियारों का एक सामाजिकार्थिक दस्तावेज है– बलचनभा, मैला आँचल, परती परी कथा, जल टूटता हुआ, अलग अलग वैतरणी, आधा गाँव, सफेद मेमने आदि से होती हुई जगदीशचन्द्र के उपन्यासों में धरती धन न अपना, मुट्‌ठीभर कंकर, कभी न छोड़े खेत से होती हुई अद्यतन जारी है। पात्र ''टाइपड करेक्टर के नहीं हैं। इनके पात्रों की सबसे बड़ी अहिमयत और वैशिष्ट्य यह है कि वे अपना अलग व्यक्तित्व और पहचान रखते है। बावजूद इसके यह अलग व्यक्ति भारतीय जातीय स्वरूप को उजागर करने वाला है– वह आधुनिकता के अतिरिक्त मोह से आच्छादित नहीं है। जीवंत भाव से लबा लब भरे पात्रों की संघर्ष चेतना रेखांकित करने योग्य है और साथ में उनमें अपनी अस्मिता और अहं को पहचान लेने की तड़प भी है।

कभी न छोड़े खेत' जगदीशचन्द्र द्वारा रचित यह उपन्यास 25 परिच्छेद एवं 219 पृष्ठ में फैला है। स्वतंत्रत भारत के विश्रृंखल भारतीय गाँव का संवेदनात्मक आकृति उपन्यास 'कभी न छोड़े खेत' है। इस उपन्यास के गाँव पर अभिशाप की ऐसी काली छाया मंडित है– जिसके घुटन में पता नहीं कब दम घुट जाये। स्वतंत्रता के पूर्व गाँव ने जो सपने संजोये थे, आशा आकांक्षाएँ और उमंगे पाली थी वे सब चूर–चूर हो गयी हैं। अविश्वास, अज्ञान अशिक्षा, एवं शोषण का जितना भी क्रूर और भयावह रूप हो सकता है,उसी वातावरण का आत्यांतिक रूप इस उपन्यास में छाया हुआ है। घटना गाँव के चौधरियों, नबंरदारों और नीलोवालिए के मध्य पुराना संघर्ष का आधार मुख्य रूप से उपन्यास की सशक्त नारी जसवंतकौर है। यह नारी युग का निर्माण करती है। वह जीवन में आने वाली सभी चुनौतियों को स्वीकार करती है। और एक दीप अपने अदम्य साहस और स्नेह के तेल से प्रज्जवलित करती है। यहाँ जसवंतकौर समस्त नगरीय पात्रों को पीछे धकेल देती है। जगदीशचन्द्र ने जसवंतकौर का चरित्र रचकर नारी की सबलता को भारतीय संस्कृति की पृष्ठभूमि पर रखने का अद्‌भुत साहस किया है। इसे इन्होंने ऐकान्तिक भूमिका से निकालकर जगत के विस्तृत प्रांगण की खुली हवा में सांस लेते हुए चित्रित किया है। ऐसा करके लेखक ने इसे पुरूष पात्रों की अपेक्षा अधिक गतिशील प्रगतिशील, और आधुनिक बनाया है। इस संबंध में यह कथन दृष्टव्य है– ''आसन्न स्थिति से निपटने के लिए जसवंत कौर दृढ प्रतिज्ञ होती है और अपने स्त्रीत्व को ललकारती है।''[1]

यह 'कभी न छोड़े खेत' की नायिका है। प्रेमचंद की 'धनिया' से एक कदम आगे बढ़ी है। जसवंत कौर ओर बहरापुरियें बड़े धड़ल्लेवाले सरदार की सौन्दर्य–शालिनी नवयुवती पुत्री हैं उसका विवाह बीस वर्ष पूर्व नीलोवालिये नत्थासिंह के छोटे भाई ऊधमसिंह के साथ हुआ था। विवाह के समय जसवंत कौर का रूप तो देखते बनता था। उपन्यासकार के शब्दों में उसके रूप की झाँकी देखी जा सकती है– ''अनार के फूलो जैसा रंग, बूटे जैसा काठ और साँप जैसी लचकीली देह। जह वह काली सूफ का घाघरा पहनकर खेती में जाती तो राहगीर रूक जाते, खेतों में काम करते लोग हल–पंजाली दँराती–खुरपा लिये उसे तकने लगते

थे।''(2) परन्तु गाँव में एक बार महामारी का प्रकोप हुआ, उसमें ऊधमसिंह ग्रसित हो कालकवलित हो गया। रूपसी जसवंतकौर विधवा हो गयी।

वैधव्य के संताप को दूर करने के लिये यह गुरूद्वारे में जाकर ग्रंथ साहिब का पाठ करने लगी। परंतु नवयौवना का मन चलायमान हो गया और गुरूद्वारे क एक सत्संगी नंबरदार बचिंत सिंह की ओर आकर्षित होने लगी। फलस्वरूप बचिंत सिंह के अनुज जगतसिंह के साथ जसवंत कौर ने विवाह कर लिया। जसवंतकौर का वैधव्य को ठुकराकर पुनर्विवाह कर गृहस्थ जीवन में प्रवेश करना नीलोवालिये एवं नंबरदारों के बीच वैमनस्य का कारण है। मानो वह ''महाभारत'' की 'द्रौपदी' हो गयी और पंजाब का यह छोटा सा गाँव रक्तपात से आरक्त हो उठा। इसके बाद पुलिस विभाग, चिकित्सा विभाग, न्यायालय विभाग ने इस गाँव में रहने वाले भोले–भाले लोगों को किस सीमा तक अपने स्वार्थ पूर्ति का साधन बनाते है– प्रस्तुत उपन्यास में चित्रित है, और संभवतः लेखक का उददेश्य भी यही है।

इस वातावरण में जसवंतकौर मौन किन्तु ध्वसांत्मक नहीं सर्जनात्मक सहनशील नारी है। इस संदर्भ में डॉ. देवेन्द्र कुमार गुप्त का कथन है कि –''वह परम्परागत रूढ़िवादी सामंती जीवन की संकीर्ण सीमाओं को तोड़कर अपने स्वतंत्र जीवन निर्माण करने में सक्षम हैं।'' (3) समूचे उपन्यास में जसवंतकौर का व्यक्तित्व ही स्पष्ट , प्रबल और आकर्षक है। प्रथम दृष्टि में देखने पर यह प्राप्त होता है कि उपन्यासकार ने जसवंत कौर के चरित्र को अपनी कल्पना की तूलिका के रंग में भरने का प्रयास नहीं किया है तथापि उसका सहज मानव सुलभ व्यक्तित्व अपनी सहजता वृत्तियों के साथ हीर की 'कणी' के समान चमक उठी है। समूचा कथानक जसवंत कौर के केन्द्रिय चरित्र से संचालित, नियंत्रित और गतिशील है। उपन्यास में घटित और प्रस्तुत परिवेश उसके चरित्र और आचरण के भार से परिवेष्ठित प्रतीत होते है।

जसवंतकौर इस उपन्यास में प्रेमिका, पत्नी, माँ एवं शोषित नारी के रूप में उपस्थित है। वह बचिंत सिंह की प्रेमिका है, जगतसिंह की पत्नी, करतार की माँ एवं समाज के ठेकेदारों द्वारा शोषिता है। निराला ने भी नारी को अपने काव्य में देवी, सहचरी, प्राण, माँ और कन्या के रूप में चित्रित किया है। जसवंत कौर बचिंत सिंह की अंध प्रेमिका थी। जसवंत कौर बचिंत सिंह से प्रेम करती थी परंतु बचिंत सिंह धन लोलुपता के कारण उससे प्रेम करता है। इसकी पूर्ति न होने पर वह उसे अपनी पत्नी के रूप में स्वीकार न कर अपने अनुज के लिये परिणीता बनने के लिये राजी कर लिया। पूर्व में जसवंत कोर ने अस्वीकार किया परंतु जब बचिंत सिंह ने यह कहा कि ''जिस घर में मै जमीन काफी नहीं होती वहां सब कुछ साँझा होता है, तो वह राजी हो गयी'' (4) जगतसिंह की पत्नी के रूप में जसवंत कौर एक दुर्निवार व्यक्तित्व लेकर उपस्थित होती है। जब रिश्तेदार उन्हें निपूती मानकर उसकी संपत्ति को अपने अधिकर में करना चाहते है, नीलोवालियों के 'टब्बर' प्रसन्न हो रहे है जगतसिंह निरूत्साहित होकर टूट गा है, चारो ओर निराशा ही निराशा है तब जसवंतकौर ही आशा का दीप लेकर संकल्प करती है– ''भोयो वाहे गुरू ने करतार को उठा लिया तो क्या हुआ। उसका बाप और ताया तो जिंदा है, उन्हे औतड़े नहीं बनने दूंगी।'' (5) वह संकल्प नही नहीं लेती बल्कि इस दिशा में ब्रह्म को आवृत करने वाली प्रकृति की तरह प्रयास करने के लिये तत्पर होती है। किसी आधुनिक नारी की तरह अपने पति की चिकित्सा के लिये तत्पर है– ''रलहना जा रही हूँ। ..... हकीम के पास..... कारूग दिखाकर तेरे लिये दवाई लेने।''(6)

करतार की माँ होने के कारण वह वात्सल्य से भरी हुयी है। माता जसवंत कौर ने ममता की सलामती के लिये गुरूद्वारे जाकर मनोरथ भी किया है– ''मै एक खेत डेरे की सेवा के लिये दे दूँगी। मेरा काका और उसका बापू सलामत रहे।''(7) परन्तु अपने वात्सल्य को लूटते हुए देख पुकार उठती है– ''हाय वे पुस्तरा तू मुझे छोड़कर कहाँ चला गया है।''(8) इस बार जसवंत के साहस का बांध टूट गया और मन आत्मान्वेषण के सागर में डूब गया। उसका एक चित्र उपस्थित है– ''उसकी आँखों के सामने अपना पूरा जीवन घूम गया। वह सोचकर उसके आँसू राके नहीं रूकते थे, कि उसे अपने जन्म से लेकर आज तक सुख नहीं मिला। सुख की तलाश में उठाया हुआ हर कदम उसके लिये और भी बड़ी मुसीबतों का कारण बना।''(9) इस रूप में जसवंत कौर और भी जीवंत हो उठी है। इस तथ्य का संकेत डॉ. धर्मवीर भारती के शब्दों में इस प्रकार है– ''औपन्यासिक पात्र अगर आत्मान्वेषण कर पाता है या उस ओर उन्मुख होता है, तभी वह सजीव पात्र बन पाता है।''(10)

शोषिता नारी के रूप में जसवंत कौर का सामाजिक, धार्मिक शोषण होता है। नारी शोषण का विस्तृत रूप तो इस कृति में विस्तार से नहीं है, परन्तु जो है, वह भी कम नहीं है। गुरूद्वारे का अंधा–कीर्तनिया अक्षर सिंह कहता है– ''तेरी आवाज को मै कैसे भूल सकता हूँ जो मेरे तन मन में घी शक्कर की तरह रची सी है।....मैने ते वाहे गुरू से भी इतनी लौ नहीं लगाई थी जितनी तेरे साथ। लेकिन तेरा मन बेईमान निकला। तू ही सबद कीर्तन और बाबे की सेवा छोड़कर रांझा गाने लगी।'' (11) एक अन्य रूप और भी है। शामसिंह महंत जी कहते है– ''तूने ऐसे आदमी से भोग किया जो गुरू का पक्का सिंख नहीं था, जिसने अमृत नहीं छका था।.... डेरे में गुरू

के इतने पक्के सिंख थे । अगर तेरे अंदर काम की इतनी ही आग थी तो उनमें से किसी के साथ भोग कर लेती। कम से कम धर्म भ्रष्ट होने से बच जाती।''[12] मै कुछ चित्र धर्म के आड़ में नारी के शोषित रूप को प्रस्तुत करते है। इसी तरह से सामाजिक क्षेत्र में काम करने वाले नारियों का शोषण समाज के अधिष्ठाताओं ने किया है। उपन्यासकार ने इसका भी चित्रण यदा कदा किया है। जसवंतकौर का अपना एक रिश्तेदार सरदारा सिंह उसे अकेला समझ अपनी भोग्या दृष्टि का निशाना बनाना चाहता है। इसका एक रूप जगदीश चन्द्र ने इस तरह प्रस्तुत किया है – ''जसवंत कौर निरन्तर रोती रही तो सरदारा सिंह ने अपना हाथ, उसके कंधों से उठाकर उसकी बगलों के नीचे दे दिये। अपना मुंह उसके मुंह के इतना निकट ले गया कि उसकी दाढ़ी और मूंछों के बाल जसवंतकौर के गालों को छूने लगे।'' [13] इसी तरह मिलखासिंह जब जसवंत कौर का रूप वर्णन मुंशी के समक्ष प्रस्तुत करता है तो उसकी दृष्टि में कामेच्छा जागृत हो उठती है। परन्तु जसवंतकौर ने अपनी संपूर्ण शक्ति से विरोध किया है। नारी के शोषित रूप से विभिन्न रूप आज भारतीय समाज में दिखाई देते है।

प्रस्तुत उपन्यास में जसवंतकौर प्रतीक की सीमा से उठकर एक व्यक्ति बन गई है। बहुत दूर तक तो वह नारी शोषण का प्रतीक है। उसने विरोध किया है– परंतु मूक। वह स्वाभिमान एवं आत्मविश्वासी है। यद्यपि वह कहीं व्यक्त नहीं करती तथापि एक भारतीय नारी की तरह उसके व्यवहार, उसके विचार सब कुछ अवगुंठन में है। कितु नारीगत शालीनता जब भी मुखर हुई है तो मानों भूचाल सा आ गया है। आमूल.....चूल परिवर्तन हो गया ..... नूतन जीवन स्पंदन मिल गया।

नीतिवादी व्यक्ति जसवंतकौर के सतीत्व पर आक्षेप कर सकते है कि वह अपने जीवन में एकनिष्ठ क्यों नहीं रही। परंतु उसकी निष्ठा अपने को संस्थापित करने में है, क्रियात्मक रूप देने में है, क्यों कि वैधव्य काट लेना एक नीति है, आधार है। परंतु जसवंतकौर नीति नहीं, आधार नहीं है अपितु वह व्यक्ति है– सुख दुख से बिलखती और मुरझाती हुई। वह मृत नहीं जीवित है– विनाश में पुनर्सष्टि का संकल्प है, पराजय में 'विजय की अदम्य प्रतिमूर्ति है। एक वाक्य में हम कह सकते है कि जसवंतकौर भारतीय संस्कृति की दाय है।

संदर्भ ग्रंथ

1. उपन्यासकार जगदीश चन्द्र संवेदना और शिल्प – डॉ.
केदारनाथ पाण्डेय 1992 पृष्ठ 49
2. कभी न छोड़े खेत जगदीश चन्द्र – 1972 पृष्ठ 21
3. जगदीश चन्द्र दलित जीवन के उपन्यासकार सं. धमन
लाल – 2010 पृष्ठ 55
4. कभी न छोड़े खेत जगदीश चन्द्र 1972 पृष्ठ 22
5. कभी न छोड़े खेत जगदीश चन्द्र 1972 पृष्ठ 207
6. कभी न छोड़े खेत जगदीश चन्द्र 1972 पृष्ठ 208
7. कभी न छोड़े खेत जगदीश चन्द्र 1972 पृष्ठ 133
8. कभी न छोड़े खेत जगदीश चन्द्र 1972 पृष्ठ 151
9. कभी न छोड़े खेत जगदीश चन्द्र 1972 पृष्ठ 155
10. मानव मूल्य और साहित्य – डॉ. धर्मवीर भारती प्रथम
संस्करण पृष्ठ – 111
11. कभी न छोड़े खेत जगदीश चन्द्र 1972 पृष्ठ 130
12. कभी न छोड़े खेत जगदीश चन्द्र 1972 पृष्ठ 132
13.कभी न छोड़े खेत जगदीश चन्द्र 1972 पृष्ठ 127